International Journal of Academic Research
ISSN: 2348-7666 : Impact Factor : 1.855
Vol.2, Issue-4(1), October-December, 2015

राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के कर्णधार

श्वेता सिंघल, शोधार्थी,
सांई नाथ विश्वविद्यालय,
राँची (झारखण्ड)

पण्डित मदनमोहन मालवीय (1861–1946)

पण्डित मदनमोहन मालवीय का जन्म 1861 में हुआ। 1884 में उन्होंने बी.ए. पास किया। उसके बाद उन्होंने वकालत की परीक्षा भी पास की। 1886 में पहली बार उनका कांग्रेस से सम्पर्क हुआ और जीवन के अन्त तक वे इसके साथ रहे, चाहे उनके इस संस्था से कई बार कितने भी मतभेद क्यों न रहे हों। वे कन्द्रीय विधान सभा के सदस्य भी काफी समय तक रहे। 1929 में जब कांग्रेस के सदस्यों ने अपना त्याग–पत्र दे दिया, तो उन्होंने नहीं दिया। उन्हें ऐसा करने का अधिकार भी था, क्योंकि वे कांग्रेस के टिकट पर नहीं चुने गए थे। 1930 में जब राजनीतिक परिस्थिति बदली, तो उन्होंने अपना त्याग–पत्र केन्द्रीय विधान सभा से भी दे दिया। यद्यपि वे असहयोग आन्दोलन और सविनय अवज्ञा आन्दोलन के विरुद्ध थे, तथापि उन्होंने सच्चे सत्याग्राही की भाँति सरकार की आज्ञाओं और कानूनों को तोड़ा।

मालवीयजी 1902 में उत्तर प्रदेश की विधान परिषद् के सदस्य चुने गए। उन्होंने वहाँ वार्षिक वित्तीय विवरणों (बजटों), उत्पादन कर विधेयक तथा कई अन्य विधेयकों पर महत्वपूर्ण भाषण दिए। 1910 में मालवीयजयी केन्द्रीय विधान सभा के सदस्य चुने गए और 1920 तक रहे। उन्होंने वहां गोखले के प्रारम्भिक शिक्षा विधेयक का समर्थन किया। 1919 में उन्होंने रौलेट बिल का केन्द्रीय विधान राभा में घोर विरोध किया। 1924 में मदनमोहन मालवीय दुबारा केन्द्रीय विधान सभा के सदस्य स्वतन्त्र कांग्रेसी के रुप में चुने गए। 1927 में वे राष्ट्रीय दल के केन्द्रीय विधान सभा में प्रधान चुने गए।

मालवीयजी भारत की औद्योगिक उन्नति में बहुत रुचि रखते थे। उनके प्रयत्नों से 1905 में बनारस में भारतीय औद्योगिक सम्मेलन हुआ। 1907 के बाद में उनके प्रयत्नों से ही यू.पी. औद्योगिक सम्मेलन की बैठक इलाहाबाद में हुई। 1932 में मालवीय जी दूसरे गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए लन्दन गये। 1932 में इलाहाबाद में उन्होंने एकता सम्मेलन

की अध्यक्षता की। उन्होंने 1934 में एम.एस. अणे से मिल कर रेम्जे मेक्डोनल्ड के साम्प्रदायिक निर्णय का विरोध किया था।

मालवीयजी की हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों में अगाध श्रद्धा थी। वे श्रीकृष्ण को अवतारी मानते थे। वे श्रीमद्भगवद् गीता में बताए हुए कर्म एवं निष्काम कर्म के सिद्धान्तों में विश्वास रखते थे और उनका कहना है कि धर्म तथा सत्य की अन्त में जीत होती है। पाप तथा अधर्म के विरुद्ध उसकी विजय निश्चित है। वे गीता के इन सिद्धान्तो में विश्वास करते थे कि धर्म की रक्षा के लिए परमेश्वर या कोई पुरुषोतम अथवा कोई महात्मा इस संसार में जन्म लेता है। मालवीयजी, तिलक, विवेकानन्द तथा अरविन्द घोष की तरह हिन्दू धर्म की श्रेष्ठता में विश्वास रखते थे। उन्होंने सनातन धर्म महासभा की भी बुनियाद डाली थी। यद्यपि वे पक्के हिन्दू थे, परन्तु साम्प्रदायिक मामलों में बहुत उदार थे। यहाँ तक कि मौलाना अली और शौकत अली भी उनकी धार्मिक उदारता से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। इसका कारण यह था कि वे हिन्दुओं की मुसलमानों पर हुकूमत स्थापित नहीं करना चाहते थे, बल्कि मुसलमानों की प्रत्येक उचित मांग को मानने के लिए तैयार रहते थे और हिन्दू–मुस्लिम एकता के पक्के समर्थक थे।

मालवीयजी को स्वतन्त्रता और संवैधानिक आन्दोलन में पूरा विश्वास था। वे स्वराज्य के महान् समर्थक थे। वे चाहते थे कि शिक्षित भारतीयों को ऊंचे पद तथा विधान परिषदों में काफी प्रतिनिधित्व दिया जाए। उन्होंने राज्यपालों तथा गवर्नर–जनरल की कार्यकारिणी परिषद् में भारतीयों के उचित प्रतिनिधित्व की मांग की। मालवीयजी ने स्वदेशी आन्दोलन का पूर्ण समर्थन किया। उन्होंने भारतीयों के लिए आत्म–निर्णय के अधिकार का भी समर्थन किया।

1918 में दिल्ली कांग्रेस में अध्यक्षीय भाषण देते हुए उन्होंने कहा था कि आत्म–निर्णय हमारा जन्मसिद्ध अधिकर है और हमें आशा है कि ब्रिटिश सरकार इसे अवश्य ही भारत में लागू करेगी। मालवीयजी सशस्त्र क्रान्ति के विरुद्ध थे और अहिंसा तथा धर्म के आधार पर आतंकवाद की निन्दा किया करते थे। यद्यपि मालवीयजी आर्थिक ढांचे में सुधार चाहते थे, परन्तु समाजवाद से उन्हें साहनुभूति नहीं थी। उन्होंने भारत को राष्ट्रवाद का सिद्धान्त दिया जिसका आधार सांस्कृतिक था। वे भारत की सर्वांगीण उन्नति चाहते थे और इस हेतु धार्मिक तथा राष्ट्रीय शिक्षा पर बहुत बल देते थे। हजारीप्रसाद द्विवेदी, रामधारीसिंह दिनकर आदि ने भी इस बात की पुष्टि की है।

यद्यपि वे राष्ट्रवादी थे, तथापि वे पक्के हिन्दू भी थे, उनके जीवन में राष्ट्रवाद और हिन्दुत्व का सुन्दर समन्वय पाया जाता था। वे साम्प्रदायिकता में बिल्कुल विश्वास नहीं करते थे। वे दो बार कांग्रेस के और तीन बार हिन्दू महासभा के प्रधान चुने गए। कोई भी व्यक्ति उनकी सच्चाई पर कभी सन्देह नहीं करता था। जब केन्द्रीय विधान सभा में उन्होंने स्वराज्य दल को मुसलमानों के सामने हिन्दू हितों को समर्पित करते देखा, तो उन्होंने लाला लाजपतराय से मिलकर हिन्दुओं के हितों की रक्षा के लिए राष्ट्रवादी दल को संगठित किया।

साम्प्रदायिक निर्णय की तरफ कांग्रेस का जो रवैया था, उससे भी उन्हें घोर निराशा हुई। वे मुसलमानों की अनुचित मांगों को मानने के विरुद्ध थे। गोलमेज सम्मेलन में कांग्रेस की मांगों का जर्बदस्त समर्थन किया। 1942–43 के आन्दोलन के समय मदनमोहन मालवीय जेल के बाहर थे। उन्होंने 'कस्तूरबा निधि' के लिए एक करोड़ से अधिक रु. इकट्ठा किये। गांधीजी उन्हें चन्दा इकट्ठा करने में सबसे चतुर मानते थे। रोमा रोलां ने भी बात की पुष्टि की है।

मदनमोहन मालवीय यद्यपि शुरु में ब्रिटिश सरकार के परम मित्र थे, परन्तु बाद में आलोचक बन गए थे। वे स्वदेशी कपड़े तथा अन्य वस्तुओं के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने बड़े परिश्रम से बहुत चन्दा इकट्ठा करके 4 फरवरी, 1918 ई. को बनारस विश्वविद्यालय (बी.एच.यू.) की स्थापना की। यह उनके जीवन की सबसे बड़ी देन है। वे पक्के सनातनी थे और गौ–रक्षा के लिए उन्होंने महान् कार्य किया।

उन्होंने अपना सारा जीवन देश और धर्म की रक्षा के लिए लगा दिया। वे हिन्दी के भी प्रबल समर्थक थे। उन्हीं के प्रयासों से यू.पी. में हिन्दी को ऊंचा दर्जा प्राप्त हुआ। वे अच्छे पत्रकार भी थे। वे 'हिन्दुस्तान', 'इण्डियन यूनियन', 'अभ्युदय' इत्यादि के कुछ समय तक सम्पादक रहे। उन्होंने उत्तर प्रदेश में 'लीडर' नामक समाचार पत्र के निकलवाने में भी हाथ बंटाया। वे समाज सुधारक थे और उन्होंने हरिजनों को भी गले से लगाया। वास्तव में वे त्याग और तपस्या की प्रतिमूर्ति थे। आचार्य पी.सी.रे. ने कहा था कि "महात्मा गांधी के बाद किसी ऐसे अन्य व्यक्ति को पाना कठिन था, जिसने मालवीयजी के समान त्याग किया हो और विभिन्न प्रकार के कार्य करने का उनके जैसा सबूत दिया हो"।

लाला लाजपतराय (1885–1928 ई.)

लाला लाजपतराय पंजाब के शेर कहलाते थे। वे बड़े ओजस्वी वक्ता और अत्यन्त उच्चकोटि के देशभक्त थे। उन्होंने देश–हित के लिए कठिन–से–कठिन यातनाऐं भोंगी और अन्त में जीवन की आहूति भी स्वतन्त्रता यज्ञ में दे दी। उनका नाम उनके त्याग और बलिदान के कारण सदा अमर रहेगा। इस हुतात्मा का जन्म 28 जनवरी, 1865 को दुधिके ग्राम में जगराओ के पास (पंजाब के लुधियाना जिला में) हुआ। उन्होंने गवर्नमेंट कॉलेज लाहौर से बी.ए. किया और उसके बाद 1885 में वकालत पास की, जिसकी परीक्षा में उन्होंने दूसरा स्थान प्राप्त किया। पहले उन्होंने हिसार में वकालत शुरु की परन्तु बाद में 1892 में लाहौर आकर वकालत शुरु की। यहां उन्होंने डी.ए.वी. कॉलेज, लाहौर की उन्नति में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन दिनों पंजाब में आर्य समाज का आन्दोलन पूरे जोरों से चल रहा था। लालाजी ने अपना तन–मन–धन इसमें लगा दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने फिरोजपुर (पंजाब) के अनाथालय की बड़ी सहायता की।

1905 से उन्होंने देश की राजनीति में सक्रिय भाग लेना शुरु किया, उन्होंने बंगाल के विभाजन का कड़ा विरोध किया। 1905 में कांग्रेस ने उन्हें गोखले के साथ इंग्लैंड भेजा ताकि ये दोनों व्यक्ति ब्रिटिश सरकार और जनता के सामने भारतीय दृष्टिकोण को रखें। उन्होंने वहां पर अनेक भाषण दिए और वहां के प्रमुख नेताओं से मिले। वहां के लोग अपनी नागरिक स्वतन्त्रता तथा राजनीतिक अधिकरों पर जितना बल देते थे, उससे वे काफी प्रभावित हुए। स्वदेश लौट कर लाला लाजपतराय ने बताया कि वहां की जनता की रुचि भारतीय मामलों में बहुत अधिक नहीं है और भारतीयों को विदेशी सहायता की बजाए अपने पर निर्भर रहना चाहिए तथा अपने में शक्ति उत्पन्न करके अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए।

लाला लाजपतराय, तिलक और विपिनचन्द्र पाल की तरह, उग्रवादी नेता थे। उन्होंने अपने ओजस्वी भाषणों और लेखों द्वारा जनता में महान् जागृति उत्पन्न की। वे समाजवादी थे और पूंजीवादी तथा आर्थिक शोषण के सख्त विरुद्ध थे। वे किसानों और मजदूरों की उन्नति चाहते थे। 1907 में उन्होंने सरदार अजीतसिंह, से मिल कर 'कोलेनाइजेशन बिल' के विरुद्ध आन्दोलन चलाया। आन्दोलन बड़े जोरों से चला। ब्रिटिश सरकार आतंकित हो उठी और उसने इन दोनों देशभक्तों को बिना मुकदमा चलाए 6 महीने के लिए देश निर्वासन का दण्ड देकर माण्डले (बर्मा) की जेल में बन्द कर दिया।

मोतीलाल नेहरु (1861–1931 ई.)

पण्डित मोतीलाल नेहरु श्री जवाहरलाल नेहरु के पिता थे। आप उत्तर प्रदेश के अत्यन्त प्रसिद्ध वकील थे। उन्होंने 1912 में 'इण्डीपेण्डेण्स' नामक पत्र इलाहाबाद से निकालना शुरु किया। पहले वे उदारवादी विचारधार के थे, परन्तु बाद में 1919 में अमृतसर के हत्याकांड, पंजाब में मार्शल लॉ, मिसेज एनीबेसेण्ट की गिरफ्तारी, महात्मा गांधी के सम्पर्क और अपने पुत्र जवाहरलाल के प्रभाव के कारण काफी हद तक उग्रवादी बन गये थे।

अमृतसर के हत्याकाण्ड की जांच करने के लिए जो कमेटी कांग्रेस की तरफ से बैठाई गई थी, मोतीलाल नेहरु उसके सदस्य थे। इस कमेटी के अन्य सदस्य गांधीजी, चित्तरंजन दास, फजलुल हक और अब्बास तैय्यबजी थे। 1919 में अमृतसर कांग्रेस के अधिवेशन के वे अध्यक्ष चुने गए। उन्होंने असहयोग आन्दोलन में भाग लिया और अपने सुखों को छोड़ कर जेलों का जीवन बिताया। जेल से छूटने के बाद उन्होंने भारत में चित्तरंजन दास से मिलकर स्वराज्य दल को संगठित किया। वे केन्द्रीय विधान मण्डल में स्वराज्य दल के नेता चुने गये। उन्होंने वहां सरकार की नीति की कड़ी आलोचना की और भारतीय स्वतन्त्रता की जोरों से मांग की।

1928 में उन्होंने साइमन कमीशन के बहिष्कार में महत्त्वपूर्ण भाग लिया। बाद में उनकी अध्यक्षता में भारत के भावी संविधान के लिए सर्वदलीय सम्मेलन ने एक कमेटी नियुक्त की। इस कमेटी की रिपोर्ट को नेहरु रिपोर्ट कहा जाता है। इसमें उनका प्रमुख हाथ था। यह रिपोर्ट अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रिपोर्ट है। इसमें भारत की साम्प्रदायिक और राजनीतिक समस्याओं का हल निकाला गया था। 1930 में गांधीजी के नेतृत्व में उन्होंने सविनय अवज्ञा आन्दोलन में भाग लिया। पूरे 1930 ई. के दौरान सरकार द्विविधापूर्ण रुख अख्तियार किये रही। काफी सोच–विचार करने के बाद गांधीजी को बन्दी बना लिया गया। उसके बाद जनता के नागरिक अधिकरों में कटौती का अध्यादेश बेरोकटोक के जारी रखा गया तथा प्रान्तीय सरकारों को विविध नाफरयानी वाले संगठनों पर प्रतिबंध लगाने की छूट दी गई थी।

लेकिन जून के अन्त तक कांग्रेस कार्यकारिणी को गैरकानूनी घोषित किया गया था और मोतीलाल नेहरु को उस तारीख तक मुक्त रखा गया था। इस बात की पुष्टि करते

हुए एम.एल.धवन ने अपनी पुस्तक भारत का आन्दोलन एवं स्वतंत्रता संघर्ष (1915–1947) भाग–2 (पृष्ठ 156) में लिखा है– "वे उस समय कांग्रेस के अध्यक्ष की हैसियत से काम कर रहे थे। अगस्त तक बहुत सारी स्थानीय कांग्रेस समितियों पर भी प्रतिबंध नहीं लगा था।" 1931 में उनका स्वर्गवास हो गया। मरते समय जब उनसे पूछा गया कि उनकी अन्तिम इच्छा क्या है, तो उन्होंने उत्तर दिया कि "मैं स्वाधीन भारत में मरना चाहता था परन्तु यह इच्छा पूरी न हो सकी।" डॉ. कैलाश खन्ना, बी.एल. ग्रोवर, एम.एल. धवन आदि ने भी इस बात की पुष्टि की है।

सरदार वल्लभ भाई पटेल (1875–1950 ई.)

सरदार वल्लभ भाई पटेल का जन्म 31 अक्टूबर, 1875 को गुजरात के करमसद गांव में हुआ। इन्होंने 22 वर्ष की आयु में मैट्रिक पास किया। लन्दन से बेरिस्टर बनकर 1912 ई. में लौटे और तब से प्रेक्टिस जारी की और उसमें प्रसिद्धि प्राप्त की है। इनके सम्बन्ध में डॉ. कैलाश खन्ना ने ठीक ही लिखा है– "वे गुजरात के बड़े प्रसिद्ध बैरिस्टर थे। 1918 में गांधीजी के महान् व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उन्होंने उस समय राजनीति में प्रवेश किया, जब गुजराती किसानों की तरफ से कर–मुक्ति आन्दोलन चल रहा था। 1918 में बारडोली में जो सत्याग्रह किसानों की तरफ से चला, उसका सफल नेतृत्व उन्होंने किया।

इसी के कारण उनको सरदार की उपाधि से महात्मा गांधी ने विभूषित किया। इस सत्याग्रह के कारण उनकी प्रसिद्धि सारे भारत में फैल गई और 1931 में वे कांग्रेस के प्रधान चुने गए। 1937 में उन्होंने कांग्रेस की चुनाव–मशीनरी को संगठित किया। जब कांग्रेस के आठ प्रान्तों में मन्त्रिमण्डल बन गए, तो उनके ऊपर निगरानी करने के लिए पार्लियामेण्टरी बोर्ड बनाया गया। सरदार पटेल इसके अध्यक्ष थे। 1942 में उन्होंने 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में प्रमुख भाग लिया और जेल काटीं।"

1945 में जेल से छूटने के बाद वे शिमला सम्मेलन और अन्तरिम सरकार में शामिल हुए। 1946 में जो अन्तरिम सरकार बनी, उसमें वे उप–प्रधानमंत्री नियुक्त किए गए। अंग्रेजों की भारत छोड़ने की घोषणा और मुस्लिम लीग की सीधी कारवाई तथा तोड़–फोड़ की नीति के कारण जो अव्यवस्था फैली, उसको उन्होंने बड़ी चतुरता से सुलझाया। ब्रिटिश सरकार और मुस्लिम लीग के अपवित्र मेल के कारण 1947 में जो स्थिति उत्पन्न हुई, उससे विवश होकर उन्हें पाकिस्तान स्वीकार करना पड़ा।

स्वतन्त्र भारत में उनके पास गृह विभाग तथा राज्य विभाग था। उन्होंने न केवल आन्तरिक शान्ति और व्यवस्था उत्पन्न करने में कमाल दिखाया, बल्कि देशी रियासतों को सर्वोच्चता सौंपी गई, फलतः 522 के लगभग देशी रियासतें अपनी आजादी का स्वप्न देखने लगी थी। सरदार पटेल का यह महान् कार्य था कि उन्होंने उनको केवल भारतीय संघ में ही शामिल किया और देश की एकता को सुरक्षित रखा, बल्कि उनमें सामन्तवादी तथा निरंकुश शासन को खत्म करके वहां लोकतन्त्रीय व्यवस्था जारी की।

संक्षेप में सरदार पटेल ने भारत का राजनीतिक नक्शा ही बदल दिया। इस कारण उनका नाम भारतीय इतिहास में सदा सूर्य की तरह चमकता रहेगा और आने वाली पीढ़ियां ऋणी रहेंगी। 15 दिसम्बर, 1950 को उनका स्वर्गवास हो गया। सरदार कहलाने के सम्बन्ध में बी.एल. ग्रोवर ने ठीक ही लिखा है– "सरकार द्वारा भूमिकर बढ़ाने के विरुद्ध बारडोली में सत्याग्रह आन्दोलन चलाया। इस संगठन कार्य के लिए 'सरदार' कहलाने लगे।" एम.एल. धवन, आर.के. परुथी, डॉ. कैलाश खन्ना आदि ने भी इस बात की पुष्टि की है।

"पण्डित जवाहर लाल नेहरु उनको एक विश्वसनीय मन्त्री मानते थे। उनके साथी उनका बहुत सम्मान करते थे और लोगों में उनके प्रति असीम श्रद्धा थी। इसलिए पटेल हर आने वाले समय के लिए विश्वास और चरित्र का एक स्तम्भ बन गये हैं।" इनकी अनुशासनप्रियता की चर्चा करते हुए बी.एल. ग्रोवर ने "भारतीय स्वतंत्रता संग्राम तथा संवैधानिक विकास" नामक पुस्तक (पृष्ठ 563–64) में बतलाया है कि "कठोर अनुशासन में विश्वास करते थे, ड्रिल सार्जेन्ट कहलाते थे। 1937 ई. में कांग्रेस संसदीय बोर्ड के वे अध्यक्ष बने। प्रान्तीय विधान सभाओं के चुनाव के अभियान के नेता बने। एक प्रशासक के रुप में 1947 ई. में पण्डित नेहरु के अधीन प्रथम राष्ट्रीय सरकार में सम्मिलित हुए। प्रथम उप–प्रधानमन्त्री और गृह, रियासतों, सूचना एवं प्रसारण विभाग के मन्त्री बने। इन्हें भारत का विस्मार्क एवं लौह पुरुष पुरुष कहा जाता है।" के. दामोदरन, रामविलास शर्मा, डॉ. कैलाश खन्ना आदि ने भी इस बात की पुष्टि की है।

सरदार अजीतसिंह तो बाद में बहुत वर्षों तक विदेशों में ही रहे और वहीं से स्वतन्त्रता आन्दोलन चलाते रहे। 18 नवम्बर, 1907 को लाजपतराय जेल से छूटकर लाहौर पहुंचे, जहां उनका अभूतपूर्व स्वागत किया गया। इसके बाद कांग्रेस के अधिवेशन में भाग लेने के लिए वे सूरत गए। वहां पर लोकमान्य तिलक ने कांग्रेस की अध्यक्षता के लिए अपना नाम पेश किया परन्तु गोखले ने इसका विरोध किया और कहा, "यदि आप सरकार

की अवज्ञा करेंगे तो सरकार भी आपके मार्ग में रोड़ा अटकाऐगी। वे कहते थे यदि सरकार हमारे अधिकरों को मान्यता दे तो हम औपनिवेशिक स्वराज्य चाहते हैं, वरना हम ब्रिटिश साम्राज्य से सम्बन्ध तोड़ना चाहते हैं। 16 जून, 1925 को आपके स्वर्गवास होने से देश की बड़ी हानि पहुंची।

सन्दर्भ सूची :–

1. डॉ. आर.के. परुथी (संपादक) आधुनिक भारत (1858–1905) संगठित राष्ट्रवाद का उदय, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली– 110002, 2009 ई.
2. डॉ. आर.के. परुथी (संपादक) आधुनिक भारत (1919–1939) राष्ट्रवादी साहित्य एवं क्रान्तिकारी आन्दोलन, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली– 110002, 2009 ई.
3. आधुनिक भारत (1905–1919) समाजवाद, राष्ट्रवाद और महात्मा गांधी 2008 ई.
4. बी.एल. ग्रोवर यशपाल, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम तथा संवैधानिक विकास, एस.चन्द्र एण्ड कम्पनी लि., रामनगर नई दिल्ली–110055, 2001 ई.
5. डॉ. कैलाश खन्ना, आधुनिक भारत का सामाजिक इतिहास अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली, 2009 ई.